21. संस्कारों और शास्त्रों की लड़ाई

हरिशंकर परसाई

लेखक परिचय –

हरिशंकर परसाई का जन्म 22 अगस्त, 1924 को जमानी, होशंगाबाद, मध्य प्रदेश में हुआ। 18 वर्ष की अवस्था में जंगल विभाग में नौकरी की। खण्डवा में 6 महीने तक अध्यापक रहे। 1941 से 1943 के मध्य शिक्षण कार्य का अध्ययन कर 1943 में वहीं मॉडल हाई स्कूल में अध्यापक हो गए। 1952 में यह सरकारी नौकरी छोड़ दी। इसके बाद चार साल तक प्राइवेट स्कूलों में नौकरी की। नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी विषय में एम.ए. किया। फिर नौकरी छोड़कर स्वतंत्र लेखन की शुरुआत 1957 से की। जबलपुर से 'वसुधा' नाम की साहित्यिक मासिक पत्रिका निकाली। कहानियाँ, उपन्यास, निबन्ध एवं अन्य बहुत-सी विधाओं में लेखन के बावजूद भी आप मूलतः व्यंग्यकार के रूप में विख्यात रहे। 10 अगस्त, 1995 को जबलपुर, मध्यप्रदेश में इनका निधन हो गया।

हरिशंकर परसाई हिन्दी के पहले ऐसे रचनाकार थे, जिन्होंने व्यंग्य को विधा का दर्जा दिलवाया और उसे हल्के-फुल्के मनोरंजन की परम्परागत परिधि से निकाल कर समाज के व्यापक प्रश्नों से जोड़ा। हरिशंकर परसाई की पहली रचना 'स्वर्ग से नरक जहाँ तक' मानी जाती है, जो कि मई 1948 में 'प्रहरी' में प्रकाशित हुई। इसमें इन्होंने धार्मिक पाखण्ड और अंधविश्वास पर कड़ा प्रहार किया। इन्होंने सैंकड़ों रचनाओं का लेखन किया जो कि विविध संग्रहों में संकलित है। 'तब की बात और थी', 'भूत के पाँव पीछे', 'बेईमानी की परत', 'पगडण्डियों का जमाना', 'शिकायत मुझे भी है', 'सदाचार का ताबीज', ' और अंत में', 'प्रेमचन्द के फटे जूते', 'माटी कहे कुम्हार से' एवं 'काग भगोड़ा' इनके व्यंग्य निबंध हैं। इन्होंने कहानियाँ भी लिखीं। इनके कहानियों के प्रमुख संकलन हैं – 'हँसते हैं रोते हैं', 'जैसे उनके दिन फिरे', 'भोलाराम का जीव' व 'दो नाक वाले लोग' आदि। **उपन्यास** – 'रानी नागफनी की कहानी', 'तट की खोज', ज्वाला और जल' आदि। **व्यंग्य संग्रह** – 'वैष्णव की फिसलन', 'ठिठुरता हुआ गणतन्त्र', एवं 'विकलांग श्रद्धा का दौर। **संस्मरण** – 'तिरछी रेखाएँ', 'मरना कोई हार नहीं होती', 'सीधे–सादे और जटिल मुक्तिबोध'। **बाल कहानी** – चूहा और मैं। **लघु कथाएँ** – 'चंदे का डर', 'अपना–पराया', 'दानी', 'रसोई घर और पाखाना', 'सुधार', 'समझौता', 'यस सर', 'अश्लील' आदि।

परसाईजी ने पाखण्ड, बेईमानी, भ्रष्टाचार आदि पर व्यंग्यों की गहरी चोट की है। जहाँ तक भाषा का सवाल है, इनकी भाषा में व्यंग्य की प्रधानता है। भाषा सामान्य होते हुए भी विशेष क्षमता रखती है। एक-एक शब्द तीखापन लिए होता है। हिंदी के अलावा उर्दू एवं अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी खुलकर किया है। इनकी रचनाओं में भाषा, भाव और भंगिमा के अनुरूप स्वरूप बदलती है। भाषा शैली में भी सहज परिवर्तन होता है और वह अपने उद्देश्यों की पूर्ति करने में सफल रहती है। आपको 'विकलांग श्रद्धा का दौर' कृति हेतु साहित्य अकादमी पुरस्कार भी प्रदान किया गया।

पाठ-परिचय –

प्रस्तुत पाठ 'संस्कारों और शास्त्रों की लड़ाई' एक व्यंग्यात्मक निबन्ध है। यह परसाई के निबन्ध संग्रह 'शिकायत मुझे भी है' से लिया गया है। इस निबन्ध के माध्यम से व्यंग्यकार विचारों और आचरण में विरोध का उद्‌घाटन सशक्त तरीके से करता है। इस निबन्ध में घटनाओं के कई ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करते हैं जिनमें थोड़ी-सी विपरीत परिस्थितियों के दबाव में सिद्धांतवादियों के सिद्धान्त टूट जाते हैं। आचरण और विचार के विरोध, व्यवहार में दोगलेपन को प्रस्तुत करना ही यहाँ व्यंग्यकार परसाई जी का प्रमुख उद्देश्य है।

मूल पाठ –

मेरे एक दोस्त हैं। वैज्ञानिक दृष्टि वाले आधुनिक बुद्धिवादी। परिवार से नाता तोड़कर बीसेक सालों से राजनैतिक कार्यों में लगे हैं। उनका कोई है, मुझे पता नहीं था। पर उनका भी कोई था। पिछले हफ्ते प्रयाग की गाड़ी में मुँडे सिर मिल गए।

पूछा, कहाँ जा रहे हो ?

बोले – प्रयाग।

लोग चोरी करने जाते हैं, तब इस शहर को इलाहाबाद कहते हैं, पिंडदान करने जाते हैं, तब प्रयाग कहते हैं।

पूछा – मुण्डन किसलिए ?

बोले – फादर की मृत्यु हो गई।

मैंने कहा – मुझे पहली बार मालूम हुआ कि आप भी फादर रखते थे। यों कोई बुरी बात नहीं जिनकी हैसियत है, वे एक से ज्यादा भी बाप रखते हैं– एक घर में, एक दफ्तर में, एक दो बाजार में, एक-एक हर राजनीतिक दल में। इधर एक आदमी है जिसके परसों तक 35 बाप थे। कल संविद सरकार टूट रही है तो 15 रह गए। आज वह सरकार थम गई तो 38 बाप हो गए हैं।

मुझे उनके पिता की मृत्यु का कतई दुःख नहीं था। उन्हें मैं जानता नहीं था। फिर वे 80 के थे और उनके मरने से कोई अनाथ नहीं हुआ था। दोस्त को भी दुःख नहीं था, कुछ पछतावा जरूर था।

मुझे उसकी चिन्ता थी, जिसे उन्होंने बीस साल से सच्चा पिता मान रखा था– याने मार्क्सवाद को। उन्होंने खुद अपने हाथों मार्क्सवाद का मुण्डन कर दिया था।

उनके हाथ में एक छोटी-सी थैली थी। मैंने पूछा– इसमें क्या है?

बोले– उनकी राख है। तुम्हें इतना भी नहीं मालूम?

मैंने कहा– मैं समझा, इसमें द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद है, जिसका संगम में विसर्जन होगा।

पहले वे चिढ़े। फिर कहने लगे– यार, यह बड़ा विकट संघर्ष है। एक तो संस्कार और फिर परिवार की भावना।

इस संघर्ष से मैं अनजान नहीं। चाचा की मृत्यु के बाद मैंने श्राद्ध नहीं करने का ऐलान कर दिया। मेरी जो फजीहत हुई, मैं ही जानता हूँ। उनके करने वाले और भी थे। चाचा मेरे भरोसे तो परलोक गए नहीं थे। मुझ जैसे के भरोसे कोई परलोक क्या, यह लोक भी नहीं बनाएगा।

मेरे मन में एक ही सवाल था– अगर किसी सामाजिक क्रान्ति में बौद्धिक विश्वास के साथ कोई लगा हो और तभी चाची कह दे कि बेटा, तुम्हारे चाचा की आत्मा को दुःख होगा, परलोक में उनकी दुर्गति

हो जाएगी तब क्रांतिकारी क्या करेगा? परिवार की भावना की रक्षा भी तो करनी पड़ती है। तब क्या वह यह कहेगा कि चाची, अगर तुम्हारी यह भावना है तो मैं क्रान्ति छोड़ देता हूँ।

मेरे एक दोस्त हैं। मुझसे ज्यादा ज्यादा वैज्ञानिक दृष्टि सम्पन्न, विचार और कर्म दोनों से क्रान्तिकारी। मैं ही उनसे ज्ञान और प्रेरणा लेता रहा हूँ। एक दिन मैंने उन्हें धोती पहने, पालथी मारे सत्यनारायण की कथा पर बैठे रंगे हाथों पकड़ लिया।

मुझे लगा जैसे एंबुलेंस की गाड़ी ने ही मुझे कुचल दिया हो।

मैंने दूसरे दिन उनसे पूछा– झूठ नारायण यह तुम्हारी क्या हरकत है? उसने कहा– यार, 'मदर इन ला' (सास) ने बहुत जोर डाला था।

मेरा खयाल था 'मदर इन ला' सास से अलग किस्म की होती होगी। नहीं, सिर्फ तजुर्बे का फर्क है।

यह जो 'मदर इन ला' कहलाती है, क्रांति की दुश्मन होती है। क्रांतिकारी का पहला और सबसे बड़ा संघर्ष 'मदर इन ला' से निपटना है। बात यह है कि वह बीवी दे देती है। बीबी कर्त्तव्यों को आगे बढ़ाते हुए बच्चे दे देती है। तब 'मदर इन ला' आकर कहती है – लाला, अपना नहीं तो बच्चों का तो खयाल करो।

लाला की क्रांतिकारिता भ्रांतिकारिता में बदल जाती है।

'मदर इन ला' के शिकार 20–25 क्रांतिदर्शियों की हड्डियाँ तो इधर मेरे पास ही रखी हुई हैं, और लोगों के पास भी होंगी।

संस्कार और शास्त्र की लड़ाई बड़ी दिलचस्प होती है। संस्कार और अर्थशास्त्र की एक लड़ाई मैंने साफ देखी।

एक शहर में दो साल पहले किसी सांस्कृतिक आयोजन में गया था। एक साहित्यिक रुचि के सज्जन बहुत पीछे पड़े कि मेरे घर चाय पीने चलिए। हर बार आग्रह के साथ वे यह जरूर जोड़ते – सरिता ने भी कहा है। समझा सरिता जी इनकी पत्नी होंगी। साहित्य पढ़ती होंगी। कुछ कविता वगैरह भी लिखती होंगी। चाय पीने पहुँचा, तो बैठक से उन्होंने पर्दे की तरफ मुँह करके मेरे आने की घोषणा कर दी। दुविधाग्रस्त अर्द्ध आधुनिक परिवारों में इसके बाद क्या होता है, इसका मुझे बहुत अनुभव है। पत्नी आती है। नमस्ते के बाद बने-बनाए वाक्य बोलती है– हम आपकी कहानियाँ पढ़ते रहे हैं। इतनी हँसी आती है, इतनी हँसी आती है कि बस कुछ मत पूछिए– इसी वक्त उसे याद आता है कि 'दाम्पत्य संहिता का नियम 73 कहता है– पत्नी अपना स्वतन्त्र मत व्यक्त न करे। व्यक्त करना जरूरी हो, तो उसमें पति को शामिल करे।' वह पति को शामिल कर लेती है– क्यों वह कौनसी कहानी पढ़ी थी हम लोगों ने पिछले हफ्ते?

अगर बच्चा भी हुआ, तो 'अंकलजी' को उससे नमस्ते कराया जाता है। कहा जाता है– अंकल तुम्हें बहुत मजेदार कहानी सुनाएँगे। कभी मुझसे वहीं बच्चे को कहानी सुना देने का आग्रह भी किया जाता है। नुस्खे मेरे पास सब तरह के रहते हैं। प्रौढ़ों के लिए डायबटीज का नुस्खा भी रखता हूँ और बच्चों के लिए कुकुर-खाँसी का भी। मैं बच्चे को राक्षस की कहानी फौरन सुना देता हूँ। आग्रह हो तो उनके ससुर को भी कृष्ण सुदामा की कहानी सुना दूँ।

बैठक में मैंने सोचा कि अब सरिता जी बाहर आएँगी और वही यांत्रिक चर्चा चलेगी। बड़ी देर हो गई। सरिता जी तो क्या, नाली जी भी नहीं निकलीं। सोचा चाय लेकर आएँगी। पर थोड़ी देर बाद साँकल बजी। पति महोदय भीतर गए और चाय की ट्रे लेकर आ गए।

भीतर से एक बिल्ली निकली। उस घर में बिल्ली एकमात्र मादा थी, जो पर्दा नहीं करती थी।

साँकल धातु युग से चली आती घरेलू 'कॉलबेल' है। सरिताजी कुछ संस्कार अपने घर से लेकर आई होंगी, कुछ यहाँ मिले होंगे। वह पाँव दरवाजे की तरफ बढ़ाती है, तो हाथ साँकल पर चला जाता है।

मगर जब यह स्थिति है, तो इस आदमी ने बार-बार क्यों कहा था– सरिता ने भी आने को कहा है। इस दृश्य में सरिता का कुल इतना 'रोल' है कि वह नेपथ्य में साँकल बजाती है। अगर इस आदमी को सरिता को भी मंच पर लाना है तो साँकल को निकाल फेंकना चाहिए। मगर तब वह थाली बजाने लगेगी।

दो साल बाद फिर उस शहर में गया। वे फिर मुझे चाय के लिए ले गए। इस बार उन्होंने नहीं कहा कि सरिता ने भी आग्रह किया है। उसने नेपथ्य वाला हिस्सा नाटक से काट दिया होगा। मैं बैठक में पहुँचा। उसने पर्दे की तरफ मुँह करके मेरे आने की घोषणा नहीं की। पर जरा देर बाद ही सरिताजी ट्रे लेकर बाहर आईं। एकाध औपचारिक बात की, फिर घड़ी देखी। बोलीं– आप लोग चाय पिएँ। मेरा स्कूल का वक्त हो गया। वे चप्पल फटकारती सीढ़ी से उतर गईं।

श्रीयुत सरिता पति बोले– स्कूल में नौकरी कर ली है। आजकल एक की कमाई से पूरा नहीं पड़ता है।

समझ गया, अर्थशास्त्र ने संस्कार को धोबी-पछाड़ दे दी।

हमारे जमाने में नारी को जो भी मुक्ति मिली है, क्यों मिली है? आंदोलन से? आधुनिक दृष्टि से? उसके व्यक्तित्व की स्वीकृति से? नहीं उसकी मुक्ति का कारण महँगाई है। नारी-मुक्ति के इतिहास में यह वाक्य अमर रहेगा – ''एक की कमाई से पूरा नहीं पड़ता।''

अर्थशास्त्र संस्कारों के सीने पर चढ़कर गला दबा रहा है। इधर एक लड़के ने लड़की को उसी की इच्छा से भगाकर 'सरकारी शादी' कर ली। लड़का योग्य, सुन्दर और अच्छी नौकरी वाला। पहले लड़की की माँ के संस्कारों ने जोर मारा और उसने हाय-तोबा मचाया। अर्थशास्त्र से यह बरदाश्त नहीं हुआ। उसने संस्कारों को एक पटकनी दी। माँ ने सोचा, यह जो 15 हजार दहेज के लिए रखे थे, साफ बचे। फिर 15 हजार में भी इतना अच्छा लड़का नहीं मिलता। उन्होंने कार्ड बाँट कर दावत दे दी।

शब्दार्थ –

बुद्धिवादी – बुद्धिवाद को मानने वाला/ पिंडदान – मरने के पश्चात् परिवार के लोगों द्वारा पिंड देना, मरने के बाद का एक कर्मकाण्ड/ संविद सरकार – वह सरकार जिसमें अनेक दलों के विधायक शामिल हों। /द्वन्द्वात्मक – दो के मध्य अनिश्चय होने का भाव/ श्राद्ध – श्रद्धायुक्त, शास्त्र विहित पितृ–कर्म / फजीहत– अपमान, बेइज्जती तजुर्बे – अनुभव/ संहिता – संयोग, संग्रह, संकलन, वेदों का मंत्र भाग / प्रौढ़ों – परिपक्वों, 20 से 50 के बीच उम्र की अवस्था के लोगों/ कॉलबेल – दरवाजे पर लगी घण्टी, बुलाने के लिए घण्टी/ श्रीयुत – लक्ष्मीवान्, पुरुषों के नाम के आगे लगाया जाने वाला विशेषण/ बरदाश्त – सहन, सहन करना, सहना / दावत – भोजन, भोजन का निमंत्रण/ मुँडे सिर – जिस सिर के बाल पूरी तरह कटे हुए हों/ हैसियत – योग्यता, सामर्थ्य, मान–प्रतिष्ठा/ अनाथ – निराश्रय, दीन, बिना माँ–बाप का बच्चा/ विसर्जन – प्रतिमा का धारा में बहाया जाना, त्याग, फेंकना/ ऐलान – सार्वजनिक घोषणा, मुनादी/ मदर इन ला – सास/ दाम्पत्य – पति–पत्नी सम्बन्धी/ नुस्खे – प्रयोग की विधि, तरीका/ डायबटीज – मधुमेह/ नेपथ्य – पर्दे के पीछे का स्थान/ हाय–तोबा – कष्ट में मचाया गया शोर/ पटकनी – पछाड़, कड़ा आघात।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. इस निबन्ध के अनुसार क्रान्तिकारियों की क्रान्ति का सबसे बड़ी दुश्मन कौन है?

(क) माँ (ख) फादर इन ला

(ग) पिता (घ) मदर इन ला ( )

2. निबन्ध में लेखक नारी मुक्ति का कारण किसको मानता है–

(क) संस्कारों को (ख) महँगाई को

(ग) सरकार को (घ) विज्ञान को ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. पिण्डदान करने जाते समय इलाहाबाद को किस नाम से पुकारते हैं ?
2. 'मदर इन ला' और सास में क्या फर्क है ?
3. लेखक के मित्र जो कि उन्हें घर ले जाते हैं, उनके यहाँ बिना पर्दे के एकमात्र मादा कौन थी ?
4. संस्कारों के सीने पर चढ़कर गला कौन दबा रहा है ?
5. 'संस्कारों और शास्त्रों की लड़ाई' नामक निबन्ध परसाई जी के किस निबन्ध संग्रह से लिया गया है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. लेखक को दोस्त के पिता की मृत्यु की अपेक्षा किसकी चिन्ता अधिक थी ?
2. लेखक के अनुसार प्रयाग और इलाहाबाद में क्या अन्तर है?
3. लेखक 'मदर इन ला' को क्रान्ति का दुश्मन क्यों मानता है?
4. लेखक के पास सुनाने का आग्रह करने पर किस–किस तरह के नुस्खे हैं?
5.. लड़की की माता की किस तरह की सोच से पता लगा कि अर्थशास्त्र ने संस्कारों को पटकनी दे दी?

निबंधात्मक प्रश्न –

1. 'संस्कार और शास्त्रों की लड़ाई' निबन्ध के आधार पर परसाईजी की लेखन शैली की विशेषताएँ बताइए।
2. पाठ का सार लिखते हुए इसके मूल उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।
3. **पाठ में आए निम्नलिखित गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –**

(क) यों कोई बुरी बात नहीं ..... उसके 38 बाप हो गए हैं।

(ख) अर्थशास्त्र संस्कारों के सीने ..... तो हम एक भोज दे दें।

•••